परिवार की संरचना में परिवर्तन (Changes in Structure of Family)

विलियम जे. गूड (William J. Goode) ने लगभग पचास वर्षों तक अफ्रीका, मध्य एशिया, चीन, भारत, जापान [illegible] मुल्कों के परिवार का अध्ययन किया और अपने अध्ययन में उन्होंने पाया कि कृषि प्रधान समाज में परिवार [illegible] आर्थिक इकाई के रूप में काम करता है। परिवार का स्वरूप साधारणतया सत्तावादी (Authoritarian). स्थिर एवं [illegible] (Extended) होता है। पुत्र अपने पिता के काम को विरासत के रूप में प्राप्त करता है। स्त्री और पुरुषों के बीच [illegible] का स्पष्ट बँटवारा होता है, लेकिन आज बदलती परिस्थिति में ऐसे परिवार में भी परिवर्तन हो रहा है। विस्तृत [illegible] धीरे-धीरे दाम्पत्य परिवार में बदलता जा रहा है।

Scanned with CamScanner
Scanned with CamScanner

विलियम गूड ने परिवार में होने वाले परिवर्तनों के सम्बन्ध में बताया है कि विश्वस्तर पर परिवार अपने विस्तृत स्वरूप (Extended Type) से दाम्पत्य परिवार व्यवस्था की ओर बढ़ा है, जिसके पाँच प्रमुख सूचक हैं–

1. विस्तृत परिवार धीरे-धीरे कम होता जा रहा है।
2. व्यवस्थित विवाह (Arranged Marriage) में कमी या प्रेम विवाह में वृद्धि।
3. विवाह के आर्थिक महत्त्व में कमी हो रही है, लेकिन भारत इस बात का अपवाद है कि विकास के बावजूद यहाँ विवाह का आर्थिक महत्त्व बढ़ता जा रहा है इसलिए कि वधू-शुल्क (Bride Price) और दहेज-प्रथा (Dowry) में वृद्धि हो रही है।
4. सम्बन्धियों के बीच विवाह की घटना में कमी हो रही है।
5. माता-पिता का बच्चों के ऊपर तथा पति का पत्नी के ऊपर प्रभुत्त्व एवं नियन्त्रण में कमी हो रही है। स्त्री-पुरुष के बीच समानता धीरे-धीरे बढ़ती जा रही है।

बहुत सारे समाजशास्त्रियों का कहना है कि हमें यह नहीं समझना चाहिए कि परिवार में यह परिवर्तन मात्र उद्योगीकरण से सम्भव हुआ है इसलिए कि औद्योगिक क्रान्ति के पूर्व भी पश्चिमी यूरोप एवं अमरीका में मूल परिवार मौजूद था। लेकिन इस बात से इनकार भी नहीं किया जा सकता है कि उद्योगीकरण के साथ मूल परिवार एक संगत व्यवस्था है। उद्योगीकरण के साथ-साथ बढ़ती हुई भौगोलिक गतिशीलता ने मूल परिवार को बढ़ाने में कोई कम महत्त्वपूर्ण योगदान नहीं दिया है।

क्लेटन (Richard R. Clayton, 1979) ने पारिवारिक व्यवस्था में परिवर्तन को आर्थिक व्यवस्था में होने वाले परिवर्तन से जोड़ा है। उनका कहना है कि जब समाज में आर्थिक व्यवस्था प्रमुख रूप से कृषि पर आधृत थी तो उस समय विस्तृत परिवार की प्रधानता थी तथा कृषि व्यवस्था के विकास के पूर्व आदिमकालीन समाज में प्रमुखरूप से मूल परिवार की प्रधानता थी। लेकिन जैसे-जैसे समाज अपने कृषि स्तर से औद्योगिक स्तर की ओर बढ़ता गया, मूल परिवार की प्रमुखता फिर से बढ़ने लगी। दूसरे शब्दों में, मूल परिवार आदिम एवं आधुनिक अर्थव्यवस्था की विशेषता है, तो विस्तृत परिवार कृषि प्रधान समाज की। क्लेटन ने इस तथ्य को एक सरल रेखाकृति के माध्यम से स्पष्ट करने का प्रयास किया है (**देखें रेखाचित्र-5**)।

रेखाचित्र-5 आर्थिक विकास के स्तर एवं परिवार

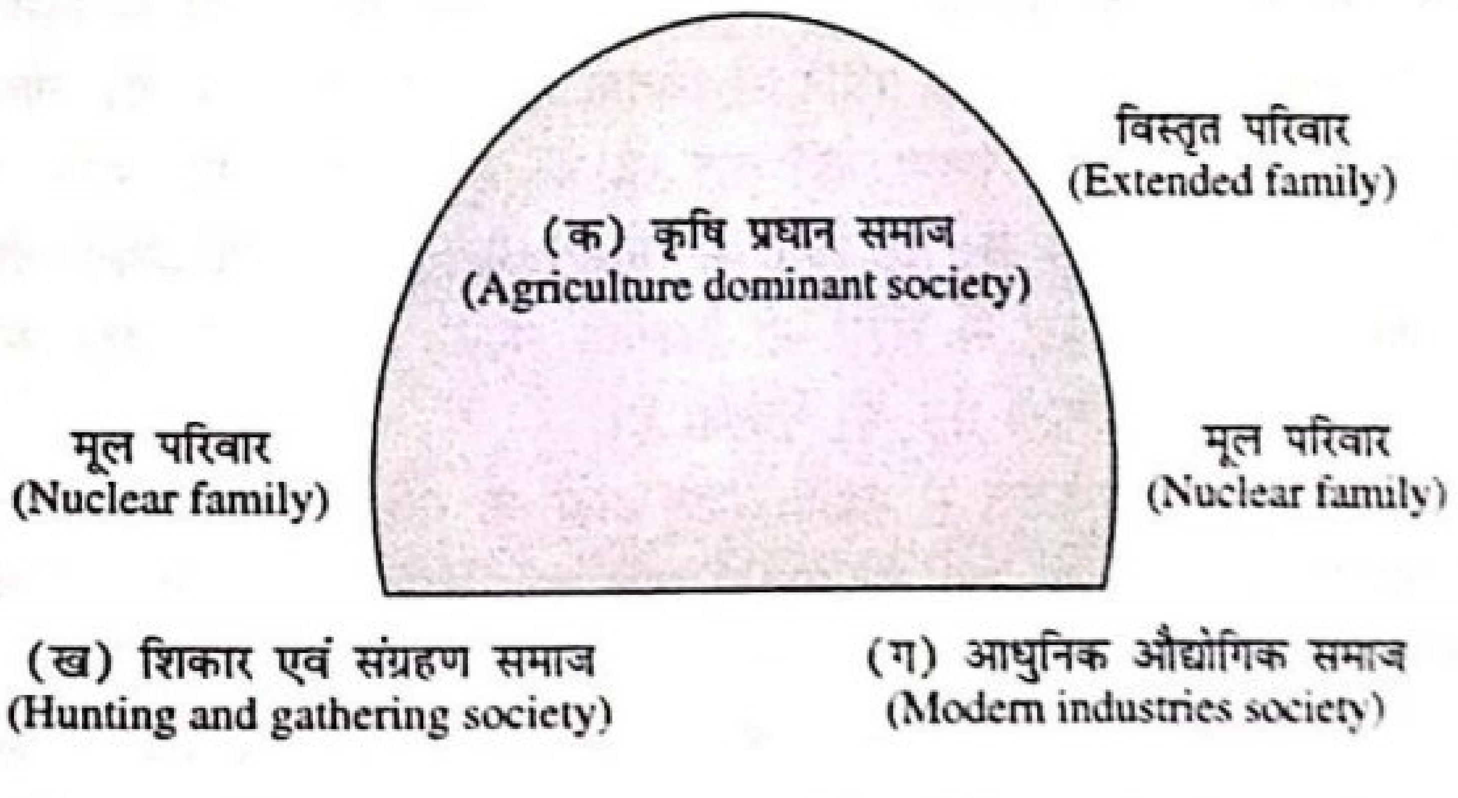

Source: Richard R. Clayton, **The Family, Marriage and Social Change**, Lexington, Mass.: D.C. Heath, 1979.

इसी तथ्य को और भी स्पष्ट करने के लिए एक नये प्रकार का रेखा चित्र प्रस्तुत किया जा रहा है। मुझे ऐसा लगता है कि आर्थिक विकास एवं परिवार के स्वरूप के बीच अंग्रेजी के 'M' Type का सम्बन्ध पाया जाता है (देखें

Scanned with CamScanner

रेखाचित्र-6)। इसे ही सांख्यिकी में **द्विबहुलक सम्बन्ध (Bimodal Relationship)** भी कहा जाता है। यहाँ पर ... स्पष्ट करने का प्रयास किया जा रहा है कि आर्थिक कारक परिवार के स्वरूप का एक प्रमुख निर्धारक है। आदिम एवं औद्योगिक समाज के अन्तर्गत मूल परिवार की प्रधानता होती है। कृषि प्रधान समाज में सामान्यतया इस प्रकार का परिवार काफी गौण होता है। उसकी तुलना में विस्तृत परिवार कुछ ज़्यादा पाया जाता है।

रेखाचित्र-6 आर्थिक विकास एवं परिवार का प्रकार

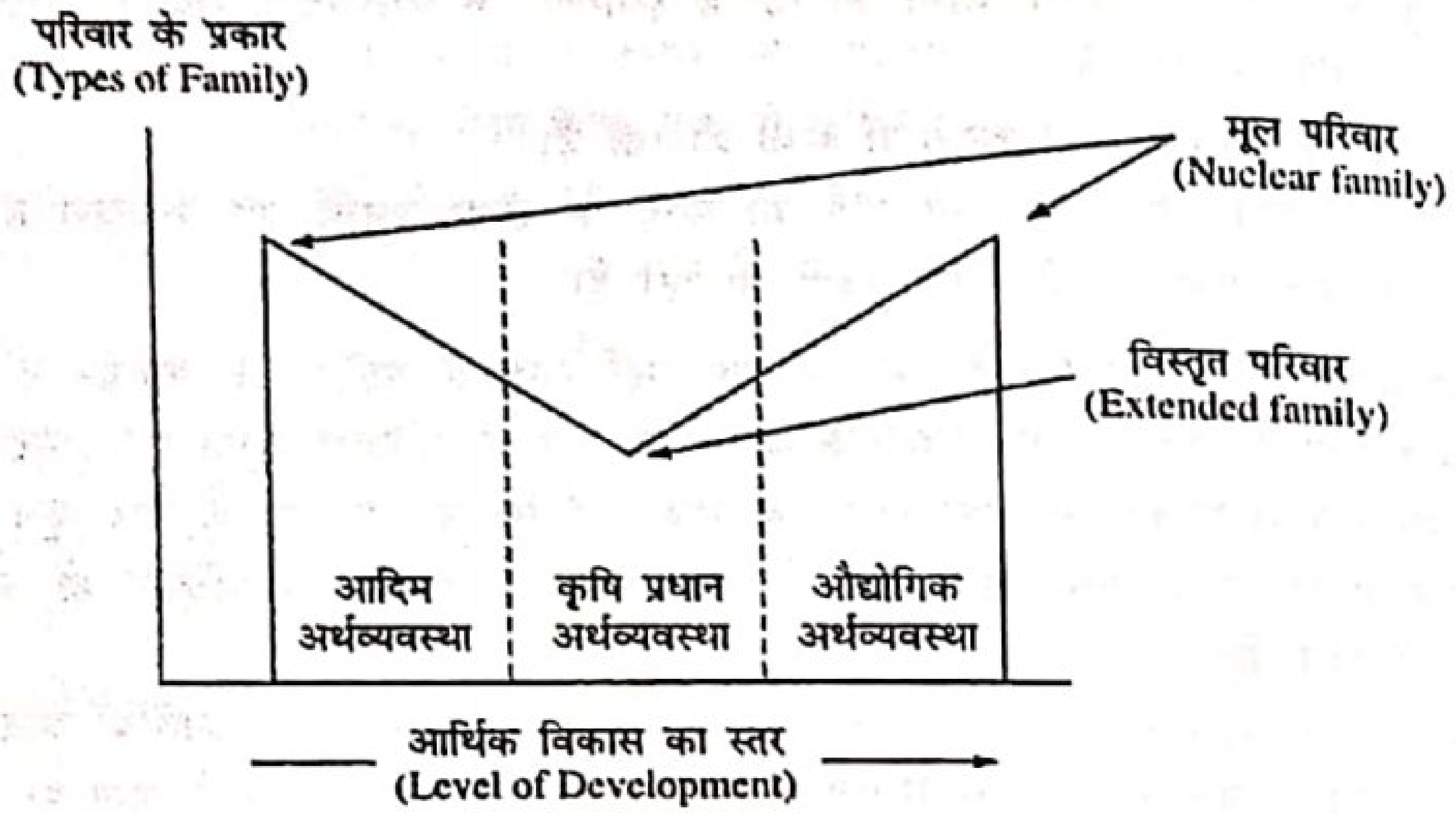

बहुत-से समाजशास्त्रियों ने यह भ्रामक विचार फैला रखा है कि विश्वस्तर पर विकासशील देशों में मूल परिवार का बढ़ना अमरीकी परिवार की नकल है। संयुक्त परिवार का विस्तृत परिवार और विस्तृत परिवार का मूल परिवार की ओर बढ़ना यह अमरीकी समाज की कोई नकल नहीं है। यदि कुछ अमरीकी समाज के वैज्ञानिक यह मानते हैं तो उनका यह विचार **नृजातिकेन्द्रित (Ethnocentric)** है। गूड ने सही फरमाया है कि यह परिवर्तन बढ़ते उद्योगीकरण, व्यक्तिवाद, आर्थिक प्रगति एवं बदलते जीवन के विचारों और मूल्यों का नतीजा है। विश्वस्तर पर परिवार का स्वरूप धीरे-धीरे दाम्पत्य परिवार का होता जा रहा है।

विश्वस्तर पर परिवार में जो परिवर्तन हो रहा है उसे गिडेन्स ने निम्नलिखित ढँग से रखा है–

1. साधारणतया आज युवक-युवतियाँ अपनी पसन्द से विवाह करना पसन्द करते हैं। लोग अब अपने परम्परागत पारिवारिक बन्धन और मूल्यों से बँधे रहना पसन्द नहीं कर रहे हैं। पढ़े-लिखे लोग अपने माता-पिता की मर्ज़ी से विवाह करना पसन्द नहीं कर रहे हैं। खास तौर पर शहरों में नौकरी-पेशे वाले लोग अपनी ही मर्जी से शादी-विवाह करना पसन्द करते हैं। अब आयोजित विवाह में लोगों का विश्वास घटता जा रहा है। बहुत-से लोगों का यह तर्क है कि यह पश्चिमीकरण, व्यक्तिवाद एवं रोमानी प्रेम का नतीजा है।

2. महिलाएँ अपने अधिकार के प्रति पहले से ज़्यादा सजग होती जा रही हैं। पारिवारिक मामलों में जो निर्णय लिए जा रहे हैं उनमें उनकी हिस्सेदारी बढ़ती जा रही है। पढ़ी-लिखी कामकाजी महिलाओं का प्रभाव पारिवारिक मामलों में विशेष रूप से बढ़ा है। अब लड़कियाँ भी अपनी मर्जी से विवाह करना पसन्द करती हैं। नारी के अधिकार तथा नारी मुक्ति आन्दोलन से जुड़ी विचारधाराओं ने संयुक्त परिवार और विस्तृत परिवार को ही नहीं, बल्कि मूल परिवार को भी पूरी तरह झकझोर दिया है। इन कारणों से आज तलाक की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। कई बार तलाक में महिलाओं की भूमिका कुछ अधिक ही देखी जाती है।

3. बहुत-से समाजों में यह व्यवस्था है कि लोगों को अपनी ही जाति या स्वजन समूह में विवाह (Endogamy) करना है। ठीक इसके विपरीत कुछ समाजों में यह व्यवस्था है कि लोगों को अपनी जाति एवं स्वजन समूह के ...

विवाह (Exogamy) करना है। इन दोनों प्रकार के वैवाहिक सम्बन्धों में परिवर्तन दिखाई पड़ने लगा है। जीवन-साथी के चुनाव में लोग अब परम्परागत वैवाहिक दायरे को तोड़ने लगे हैं।

अब तो भारत में भी लोग जीवन-साथी के चुनाव में इस बात का ध्यान रखने लगे हैं कि विवाह बराबर सामाजिक हैसियत एवं स्तर वाले व्यक्तियों के बीच हो। शहरों में तो इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है। समाजशास्त्रीय भाषा में इसे **समलोम विवाह (Homogamy)** कहा जाता है।

4. कई विकासशील देशों में यौन-सम्बन्धित विचारों में स्पष्ट परिवर्तन दिखाई पड़ने लगा है। लोगों के विचारों में, विशेषकर शहरों में, काफी खुलापन आया है। मुस्लिम समाजों में भी खुलापन में वृद्धि हुई है। इसका सीधा प्रभाव परिवार पर देखने को मिलता है, जैसे—शादी की उम्र में वृद्धि, तलाक में वृद्धि, माता-पिता के जीवन-काल में परिवार का बँटवारा, परिवार के पितृसत्तात्मक चरित्र में कमी इत्यादि।

5. यौन-इच्छाओं की पूर्ति एक लम्बे समय से परिवार का एक मुख्य प्रकार्य रहा है, लेकिन आज पाश्चात्य देशों में इसके लिए परिवार का स्थापित किया जाना कतई ज़रूरी नहीं है। बिना शादी-विवाह के लोग एक साथ रहते हैं और यौन-इच्छाओं की पूर्ति स्वच्छन्द रूप से करते हैं। यहाँ तक कि प्रजनन का कार्य भी चलता रहता है। कुछ सर्वेक्षणों ने यह पता चला है कि अमरीका एवं ब्रिटेन में 20% कॉलेज के विद्यार्थी शादी-विवाह के पूर्व यौन-सम्बन्ध स्थापित कर लेते हैं। ऐसा पाश्चात्य देशों में अक्सर देखने को मिलता है कि यौन-सन्तुष्टि और प्रजनन-कार्य पहले हो जाता है और विवाह बाद में सम्पन्न होता है। कभी-कभी विवाह एकदम नहीं हो पाता है और तलाक की भाँति सम्बन्ध टूट जाते हैं।

6. पाश्चात्य देशों में एक नये प्रकार के परिवार की उत्पत्ति हुई है। कुछ ऐसे भी परिवार पाये जाते हैं जहाँ दो **समलिंगी (Homosexuals)** साथ रहते हैं, जिसे **विलासी माता-पिता परिवार (Gay-Parent Family)** के नाम से जाना जाता है। इसमें से कुछ लोग ऐसे हैं, जो आपस में विवाह भी रचाते हैं। यह दो प्रकार का होता है—एक वह है, जिसमें दो पुरुष एक साथ रहते हैं और दूसरा वह है, जिसमें दो महिलाएँ एक साथ रहती हैं। कृत्रिम गर्भाधान (Artificial Insemination) के तरीके से ऐसी महिलाएँ बच्चों को जन्म भी देती हैं। प्रारम्भ में इस प्रकार के परिवार का चर्च के द्वारा काफी विरोध किया गया, पर अब धीरे-धीरे इस प्रवृत्ति को चर्च नज़रअन्दाज कर रहा है।

विश्व के अधिकांश समाज में विस्तृत परिवार की प्रधानता रही है। आज उसकी जगह मूल परिवार स्पष्ट रूप से उभर रहा है, लेकिन फिलिपीन्स (Philippines) इस विश्वव्यापी प्रवृत्ति का अपवाद है, जहाँ गाँवों की तुलना में शहरों में अधिक विस्तृत परिवार पाया जाता रहा है। उसी तरह पोलैण्ड में भी विस्तृत परिवार की प्रवृत्ति में वृद्धि हुई है। जबकि साधारणतया उद्योगीकरण एवं नगरीकरण की प्रक्रिया से दाम्पत्य परिवार को विश्वस्तर पर बढ़ावा मिला है।

परिवार व्यवस्था का भविष्य (The Future of Family System)

परिवार की संरचना और प्रकार्य में बहुत तेजी से परिवर्तन आ रहे हैं। पाश्चात्य देशों के बारे में एक प्रश्न उठ खड़ा हो गया है कि क्या परिवार भविष्य में लुप्त हो जायेगा? उभरते तथ्यों को देखने से ऐसा लगता है कि परम्परागत मूल परिवार का भविष्य खतरे में है। इस सन्देह का कारण स्वाभाविक है, क्योंकि तलाक में वृद्धि हो रही है। विकसित देशों में लोग विवाह के पूर्व स्वच्छन्द होकर यौन-इच्छाओं की पूर्ति और प्रजनन का कार्य कर रहे हैं। अकेले रहने वाले लोगों की संख्या में भी दिन-ब-दिन बढ़ोत्तरी हो रही है। बहुत सारे समाजविज्ञानी आज यह सोचने के लिए विवश हो गये हैं कि परिवार समिति एवं संस्था के रूप में धीरे-धीरे अपने पतन की ओर बढ़ रहा है और यह पतन सम्भवतः एक दिन परिवार को इसकी समाप्ति के कगार पर लाकर खड़ा कर देगा। ऐसी चिन्ता सिर्फ समाजशास्त्रियों एवं मानवशास्त्रियों तक ही सीमित नहीं, बल्कि आये दिन पश्चिमी देशों के कुछ राजनीतिज्ञों द्वारा भी व्यक्त की जा रही है। **आधुनिकोत्तर (Post-modern)** समाज की अपनी परेशानियाँ हैं, जो विभिन्न रूपों में समाज में उभर रहे

Scanned with CamScanner
Scanned with CamScanner

हैं। पाश्चात्य देशों का इन समस्याओं से निकलना इतना आसान नहीं है। परन्तु यह भविष्यवाणी करना [illegible] है कि पाश्चात्य देशों में परिवारविहीन समाज कब स्थापित होगा?

मार्क्स एवं उनके अनुयायियों ने भी परिवार के भविष्य पर सन्देह व्यक्त किया है, लेकिन उनके सन्देह [illegible] ऊपर चर्चित कारणों से भिन्न है। मार्क्स एवं ऐंगल्स ने यह दलील दी है कि परिवार पूँजीवादी समाज को [illegible] है। पूँजीवादी समाज के अन्तर्गत परिवार जैसी संस्था के माध्यम से बच्चों एवं महिलाओं का आर्थिक शोषण [illegible] इस व्यवस्था में लोग महिलाओं को सम्पत्ति के रूप में देखते हैं। बच्चों और महिलाओं का उत्पादन के उपकरण रूप में इस्तेमाल किया जाता है। जब सर्वहारा वर्ग पूँजीवादी वर्ग को उखाड़ फेंकेगा, तो परिवार भी समाप्त हो [illegible] प्रकार्यवादियों की तरह मार्क्सवादी चिन्तक यह कभी स्वीकार नहीं करते हैं कि परिवार सहज और सरल ढंग [illegible] संस्था के रूप में समाज में अपनी भूमिका निभाता है। खैर, जो भी हो, इस तथ्य पर एक सवालिया निशान [illegible] होता है कि पूँजीवादी व्यवस्था की समाप्ति के बाद साम्यवादी व्यवस्था में परिवार नहीं रहेगा, क्योंकि यह [illegible] व्यवस्था के शोषण का उपकरण है।

दूसरी तरफ जेसी बर्नाड (Jessie Bernard) ने अपनी पुस्तक **The Future of Marriage** (1972) में [illegible] के भविष्य पर बहुत ही विस्तारपूर्वक विचार किया है। इस सम्बन्ध में उनका कहना है कि पाश्चात्य देशों में [illegible] का भविष्य कतई खतरे में नहीं है। इसका समर्थन अन्य समाजशास्त्रियों ने भी किया है। परिवार के ऊपर एक [illegible] में लिबिटन एवं बिलॉस (Sar A. Levitan and Richard S. Belous, 1981) का कहना है कि अमरीका में [illegible] विघटन नहीं हो रहा है, बल्कि वह दिन-प्रतिदिन विकसित होता जा रहा है। उसके स्वरूप अवश्य बदल रहे [illegible] परिवार समाप्त नहीं हो रहा है। उन्हें पहले की तुलना में अमरीकी परिवार कुछ ज़्यादा ही मजबूत होता दिखाई [illegible] सभी समाजविज्ञानी इस बात से सहमत नहीं हैं कि परिवार समय के साथ समाप्त हो जायेगा या अनावश्यक हो [illegible]

भारतीय परिवार के बदलते स्वरूप

आधुनिकता की एक खास देन है मूल परिवार। इस तरह के परिवार का प्रचलन सम्भवत: पहले उन्हीं [illegible] के लोगों के बीच हुआ जिन्होंने आधुनिक उद्योग व्यापार की नींव रखी। उससे पहले खेतिहर सामन्ती समाजों में [illegible] एवं विस्तृत परिवार ही होता था जो सारी विरादरी, सारे गोत्र को अपनी लपेट में ले लेता था। इसके अलावा, [illegible] गाँव के लोगों की भी एक बिरादरी हुआ करती थी। समाज में व्याप्त ऊँच-नीच की भावना के बावजूद छोटे [illegible] लोगों से भी भाई-बहन, चाचा-ताऊ, बेटा-बेटी ऐसा कोई रिश्ता जोड़कर बात की जाती थी। उस समाज में [illegible] घर-गाँव छोड़ते नहीं थे, पास-पड़ोस बदलता नहीं था और परस्पर सहयोग के बग़ैर छोटा-बड़ा कोई भी काम [illegible] पाता था। अभी तीन-चार दशक पहले तक भारतीय कस्बों और शहरों में शादी-ब्याह बग़ैरह का सारा काम [illegible] विस्तृत परिवार के लोग मिलकर किया करते थे। सामन्ती समाज की परस्पर निर्भरता, सामुदायिकता, बिरादरी-[illegible] उस व्यक्ति स्वातन्त्र्य के आड़े आती है, जो आधुनिकता की नींव है। इसलिए आधुनिकता ने उस पूँजीवाद [illegible] दिया है, जिसमें हर सेवा पैसा देकर खरीदी जा सकती है। आज खुशी और गम के नितान्त सामुदायिक [illegible] परिवार या बिरादरी का मुँह जोहने की ज़रूरत नहीं है। जन्म से लेकर मृत्यु तक के हर संस्कार के लिए [illegible] व्यवसायी मिल जाते हैं। बस फोन लगाने की देरी है।

बीसवीं सदी के अन्त में किसी देश या समाज की 'प्रगति' का एक अचूक पैमाना यह बन चला है कि [illegible] पारिवारिक भावना (Familism) की कितनी दुर्गति हो चुकी है। उदाहरण के लिए आज के भारत में गाँव-बिरादरी [illegible] मानने वाले, न मानने वालों से 'पिछड़े हुए' हैं। न मानने वालों में सबसे पिछड़े वे हैं, जो संयुक्त परिवार में [illegible] विश्वास करते हैं और सबसे अगड़े वे हैं जो मूल परिवार में भी आस्था नहीं रखते। इसी तरह अन्यतम [illegible] प्रोटेस्टैंट देश अमरीका में मैक्सिको से आये कैथोलिक और एशिया से आये ग़ैर ईसाई इसलिए भी पिछड़े [illegible]

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

ठहरते हैं कि उन्हें पारिवारिकता में विश्वास है। आधुनिकता व्यक्ति को 'अधिकार सम्पन्न' करती है और पारिवारिकता व्यक्ति के अधिकार सीमित करती है, इसीलिए समझौते के तौर पर उसने मूल परिवार चलाया--पति-पत्नी और बच्चे। पति-पत्नी अपने ढंग से रहें और अपने बच्चों को भयंकर प्रतिद्वन्द्विता वाले समाज में सफलतापूर्वक आगे बढ़ने के लिए तैयार करें, यह आधुनिक परिवार का मुख्य उद्देश्य है।

मूल परिवार का आदर्श सभी देशों में लोग अपना चुके हैं। पाश्चात्य देशों में जो भारतीय लम्बे अरसे से रह रहे हैं उनका दृष्टिकोण भी परिवार के मामले में पूरी तरह पाश्चात्य हो चला है। शहरों के अन्तर्गत बेटा-बहू ने अलग मकान खरीद लिया। इस तरह की आधुनिकता का प्रवेश देखने के लिए अमरीका जाने की ज़रूरत नहीं है। भारत में तो इसके सैकड़ों प्रमाण आपको अपने आस-पास या अपने यहाँ ही मिल जायेंगे।

संयुक्त परिवार का टूटना आधुनिकता की दृष्टि से प्रगति है, क्योंकि आधुनिकता व्यक्ति की स्वतन्त्रता में, और व्यक्तियों की समानता में विश्वास करती है और इन दोनों चीजों के लिए ही बिरादरी या संयुक्त परिवार में कोई गुंजाइश नहीं रहती। उनमें परिवार के मुखिया की तानाशाही चलती है, व्यक्ति की अपनी मर्जी नहीं। गाँवों में बुजुर्गों को कुरेदें तो पचासियों ऐसे किस्से सुनने को मिलेंगे कि परिवार के मुखिया ने फलां को आगे पढ़ने नहीं दिया या फलां को नौकरी करने के लिए बाहर नहीं जाने दिया। बिरादरी और संयुक्त परिवार उस सामन्ती दौर की व्यवस्थाएँ हैं, जिनमें व्यक्ति के लिए गतिशीलता का आभाव था। एक तरह से गाँव ही उसकी नियति थी--जहाँ पैदा हो गया, वहीं का होकर रह गया, जिस परिवार में जन्म लिया उसकी हैसियत ने और उसके मुखिया की फितरत ने हमेशा के लिए किस्मत लिख दी।

संयुक्त परिवार में किसी व्यक्ति की आय अपनी नहीं थी, और भले ही वह ज़्यादा कमाते हों, वह अपने बच्चों पर ज़्यादा खर्च नहीं कर सकता था। सच तो यह है कि उसमें अपने बच्चों से ज़्यादा प्यार करना भी एक गुनाह था। अपने बच्चों की हमेशा बुराई की जाती थी, उन्हें डाँटा-डपटा जाता था। तारीफ और लाड़-प्यार दूसरों के बच्चों के लिए सुरक्षित रखे जाते थे। दूसरों के मुँह से भी तारीफ सुनने पर प्रसन्नता से ज़्यादा यह आशंका होती थी कि नज़र लगा रहे हैं। संयुक्त परिवार में माँ-बाप अपने बच्चे को खुद नहीं पालते थे, तमाम और बच्चों के साथ वे भी मुखिया और उसकी पत्नी की छत्र-छाया में पल जाया करते थे। सच तो यह है कि व्यक्ति की आमदनी और उसके बच्चे ही नहीं, उसका सब कुछ तब संयुक्त परिवार का हुआ करता था। उस परिवार में अपनी कोई पहचान नहीं होती थी। व्यक्ति किसी के बेटे या पोते भर ही होते थे और बदलाव अभिशाप माना जाता था।

कुछ समाजशास्त्रियों का तर्क है कि इस मूल परिवार से ही दिन-दूनी, रात-चौगुनी आर्थिक उन्नति करने वाला आधुनिक औद्योगिक पूँजीवादी समाज सम्भव हुआ है। मूल परिवार के कारण हर मर्द अपने घर का मुखिया बन सका और अपनी पत्नी को मुखिया की पत्नी का दर्जा दिला सका। पति-पत्नी अपने बच्चों पर ध्यान केन्द्रित कर सके। हर बच्चा अपने घर का राजकुमार-राजकुमारी बन सका। संयुक्त परिवार में तो वह बच्चों के समूह में खो जाया करता था। अलग-अलग आय वाले अलग-अलग रहने लगे तो पैसे का और पैसा कमाने का महत्त्व बच्चों पर उजागर होने लगा। पाश्चात्य देशों में बच्चों को शुरू से यह समझाया जाता था कि पैसा कमाओ, बचाओ और जमा पूँजी से दो का चार, चार का सोलह बनाते चले जाओ। बच्चों को अपने पाँवों पर खड़ा रहना और समय और श्रम की कीमत समझना शुरू से सिखाया जाता है इसीलिए वे आत्मनिर्भर और स्वतन्त्र व्यक्ति इकाई बन सकें। बच्चे जरा बड़े हो जाते हैं तो उन्हें अलग कमरे में सुलाया जाने लगता है। बच्चों को अपने जेब खर्च के लिए खुद कमाने की प्रेरणा दी जाती है। हम भारतीय मानसिकता वालों को यह बहुत विचित्र लग सकता है कि सम्पन्न माँ-बाप अपने बच्चों को पैसा कमाने की ख़ातिर सवेरे अखबार बाँटने जाने के लिए, पड़ोसियों के लोन की घास काटने के लिए, कारें धोने के लिए या ऐसा ही कोई और काम करने के लिए कहें लेकिन अमरीका में यह आम-सी बात है।

व्यक्ति को स्वतन्त्रता और व्यक्तियों की समानता में विश्वास करने वाली जिस आधुनिकता ने संयुक्त और विस्तृत परिवार की 'तानाशाही' और 'ग़ैर-बराबरी' खत्म करते हुए 'मैं-तुम-हमारे बच्चे' वाला मूल परिवार चलाया, उसके बारे में आशंका व्यक्त की जा रही है कि अगली सदी में मूल परिवार भी उसी तेजी से गायब हो जायेगा जिस तेजी से

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

इसी सदी में बिरादरी और संयुक्त परिवार गायब हुए हैं। यह एक विचित्र विडम्बना है कि जिन बातों से मूल परिवार [illegible] विश्वास करने वाले लोगों ने संयुक्त परिवार में विश्वास करने वालों से कहीं अधिक 'प्रगति' की है उनके कारण [illegible] अन्ततः मूल परिवार की दुर्गति हुई है। वे हैं–स्त्री-शिक्षा, परिवार में बच्चों का केन्द्रीय महत्त्व, बच्चों को आत्मनिर्भर और निडर व्यक्ति बनकर माँ-बाप से कहीं अधिक 'प्रगति' करने की दीक्षा दिया जाना।

आधुनिकता ने स्त्री को शिक्षा तो दी लेकिन स्त्री को पुरुष की बराबरी में रखने से परहेज किया। यह देखकर आश्चर्य होता है कि स्त्रियों को जो मताधिकार 'पिछड़े' देशों तक में लोकतन्त्र के आते ही मिल गया उसके लिए आधुनिक देशों में एक लम्बे अर्से तक संघर्ष चलाये। आज भी अमरीका जैसे उन्नत देश में उच्च राजनीतिक प्रशासनिक पदों पर आसीन औरतों का अनुपात भारत जैसे 'विकासशील' देश के मुकाबले में ज़्यादा नहीं है। आधुनिकता के प्रवर्त्तकों ने स्त्री-शिक्षा स्त्री को समानता दिलाने के लिए नहीं, बल्कि उसे पुरुष के लिए बेहतर गृहिणी, [illegible] बच्चों की माँ बनाने के लिए शुरू की। आखिर मूल परिवार में पत्नी की हैसियत से स्त्री पर घर चलाने, बच्चों के लालन-पालन करने और घर में पति को 'कम्पनी देने' और उससे 'कुछ घर की, कुछ जग की' बातचीत करने की भारी जिम्मेदारी जो आ पड़ी थी। संयुक्त परिवार वाला वह दौर लद चुका था जिसमें काम करने वाले और [illegible] हुआ करते थे, सारे फैसले मुखिया के हाथ में रहते थे और नवविवाहिता बहुएँ तक सब लोगों के सो जाने के बाद ही पति से मिल पाती थीं। आधुनिकता के प्रवर्त्तकों ने स्त्री-शिक्षा को नौकरी से नहीं जोड़ा, लेकिन उन्होंने यह [illegible] माना कि स्त्री को इस योग्य होना चाहिए कि पति को कभी कुछ हो जाये तो वह नौकरी करके अपने बच्चों का पेट भर सके। नौकरी भी ऐसी, जो परिवार के प्रति उनके कर्तव्यों की पूर्ति में आड़े न आती हो।

आधुनिकता के प्रवर्त्तकों के अनुसार स्त्री नौकरी परिवार की ख़ातिर तो कर सकती थी, परिवार की [illegible] नहीं। लेकिन इसके साथ ही आधुनिकता 'प्रगति' को समर्पित भी और 'प्रगति' का मुख्य पैमाना पैसा था। [illegible] बेहतर मूल परिवार के लिए स्त्री का कमाऊ होना ज़रूरी हो चला। इस प्रकार पढ़ी-लिखी स्त्री से उम्मीद [illegible] लगी कि वह अपने बूते सारा घर चलाये, बच्चे पाले और साथ ही नौकरी भी करे। मूल परिवार स्त्री का [illegible] भी अधिक शोषण करने लगा। उस पर तुर्रा यह कि विवाह पर रूमानी प्रेम (Romantic Love) आरोपित [illegible] जाने के कारण स्त्री के लिए यह भी ज़रूरी हो गया कि वह पति के लिए अत्यन्त आकर्षक बनी रहे और [illegible] लिए भी कुछ समय निकाले। यह सरासर ज्यादती थी और कोई आश्चर्य नहीं कि स्त्रियाँ विद्रोह कर बैठीं। [illegible] परिवार बच्चों को स्वतन्त्र व्यक्ति–इकाइयाँ बनने के लिए दीक्षित कर रहा था, तब वह लड़कियों से बड़ी हो [illegible] बाद किस मुँह से कह रहा था कि तुम परिवार के लिए पहले सोचो और अपनी बाद में! पत्नी को यह नसीहत [illegible] दी जा रही थी कि भले ही तुम पति–जितना या उससे अधिक कमा रही हो या कमा सकती हो, घर का [illegible] ही समझो? मूल परिवार भी यह मानकर चल रहा था कि स्त्री स्वतन्त्र इकाई होते हुए भी परतन्त्र बनकर रहेगी [illegible] मर्द की कमाई से घर चलेंगे। औरत आर्थिक दृष्टि से मर्द पर निर्भर करती रहेगी। लिहाजा विवाह ज़रूरी होंगे [illegible] विवाह बन्धन को बनाये रखना भी ज़रूरी होगा। लेकिन स्त्री की आर्थिक आत्मनिर्भरता ने सारा नक्शा बदल दिया।

मूल परिवार का प्रचलन करने वाले आधुनिकों ने गर्भनिरोध के जरिये बच्चा पैदा होने का खतरा दूर कर दिया। अब व्यक्ति सेक्स सुख का सम्बन्ध सन्तान पैदा होने से अलग कर सकता है। इसी तरह कृत्रिम गर्भाधान (Artificial Insemination) ने बग़ैर सेक्स के बच्चा पैदा करना सम्भव बना दिया और अपना सेंचित डिम्ब किसी अन्य [illegible] बच्चेदानी में पलवा लेने की तकनीक ने बग़ैर माँ बने माँ बनने की राह खोल दी। गोया अब आप सन्तान पैदा [illegible] को भी सेक्स से अलग कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में यह सवाल उठता है कि 'बायोलॉजी' (जीवशास्त्र) [illegible] नियति क्यों बने? उसे बच्चा पैदा करने और पालने वाली मशीन क्यों माना जाये? यह सवाल उठा भी ऐसे [illegible] जिसमें सम्पन्न औद्योगिक समाजों में बच्चों का कोई पूँजीगत महत्त्व नहीं रह गया था। मूल परिवार समझ गया [illegible] ज़्यादा बच्चे प्रगति के नहीं, दुर्गति के कारण बनेंगे। क्या आश्चर्य जो विवाह बन्धन का महत्त्व घटा और [illegible] जीवन में सेक्स सुख का महत्त्व बढ़ा। अभी तक मूल परिवार में आधुनिक पति ही पत्नी से वह माँग करता आ [illegible]

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

कि तुम समाज की अन्य भूमिकाओं के साथ-साथ प्रेमिका और चतुरिया की भूमिका भी निभाओ। अब पत्नी की ओर से यह माँग उठी कि पति और बातों के साथ-साथ अनन्त सेक्स सुखदाता कामदेव भी हो। इस माँग के कारण पुरुष अपने को नपुंसक-सा अनुभव कर रहा है–ऐसी चर्चा एक अर्से से अमरीका पत्र-पत्रिकाओं में होती रही है। बहरहाल, प्रेम और यौन-सुख की माँग ने दाम्पत्य जीवन में जो तनाव पैदा किये हैं, वे भी तलाक और पुनर्विवाह को आम बना रहे हैं। बताया जाता है कि अमरीका में लगभग पचास प्रतिशत जोड़े तलाक देने लगे हैं और तलाकों में 57 प्रतिशत आर्थिक कारणों से ही हो रहे हैं तो लगभग 40 प्रतिशत प्रेम-सुख या यौन-सुख की कमी के कारण। आधुनिक पुरुष भी पत्नी परम्परागत ढंग की चाहता है। इसका प्रमाण यह है कि पश्चिम में यूरोपीय मर्द एशियाई, औरतों से शादी करने लगे हैं। और हाँ, इससे प्रमाणित होता है कि पश्चिमी पुरुषों की सारी आधुनिकता एकतरफा है। आधुनिकीकरण का यह एकतरफापन ही नारी मुक्ति आन्दोलन को प्रेरित कर रहा है।

नारी मुक्ति और यौन-क्रान्ति के प्रभाव से पश्चिम में समलैंगिक क्रान्ति-सी हो गयी है। इसके चलते विवाह की यह परिभाषा भी खत्म हो गयी है कि वह मर्द और औरत के बीच होता है। मूल परिवार का जब प्रचलन किया गया था तब भले ही संयुक्त परिवार और बिरादरी की भावना खत्म हो गयी हो, प्रदेश, जाति, नस्ल, वय और लिंग की भावना बरकरार थी। लिहाजा विवाह-बन्धन में एक ही नस्ल और प्रदेश के मर्द-औरत बंधते थे और पति हमेशा पत्नी से ज़्यादा उम्र का हुआ करता था। यही नहीं, मूल परिवार चलाने वालों की जीवन-दृष्टि अति नैतिकतावादी थी और उसमें पति से आशा की जाती थी कि वह पत्नी-बच्चों के प्रति वफादार-ज़िम्मेदार रहेगा। अब तरह-तरह के बेमेल विवाह होने लगे हैं और समाजशास्त्रियों के अनुसार ये बेमेल परिवार बच्चों को प्रेम और अनुशासन की उचित खुराक देने का वह उद्देश्य पूरा करने में असमर्थ हैं, जिसकी ख़ातिर मूल परिवार चलाये गये थे। बच्चा कभी ऐसे घर में पलता है, जिसमें केवल माता या केवल पिता होता है। कभी ऐसे में, जिसमें माता या पिता में से कोई एक सौतेला होता है। पुनर्विवाह के आम हो जाने के कारण सौतेले माँ-बाप भी बदलते रहते हैं। इस कारण माता-पिता से बच्चे अपनी माता या अपने पिता को समलैंगिक विवाह बन्धन अपना लेते हुए भी देखते हैं।

क्या आश्चर्य जो इस माहौल में बच्चों से अनैतिक सम्बन्ध की चर्चा 'उन्नत' समाज में आम हो गयी है। छोटी उम्र में किसी लड़की के सौतले पिता या भाई की हवस का शिकार हो जाने की कितनी ही कहानियाँ लोग अखबारों में पढ़ सकते हैं। कई परिवार ऐसे भी होने लगे हैं, जिनमें बच्चे पैदा न करके गोद ले लेने का रास्ता अपनाया जा रहा है। इस तरह के भी कुछ परिवारों में सन्तान से अनैतिक सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं। हाल ही में प्रसिद्ध लेखक-अभिनेता-दिग्दर्शन वुडी एलन द्वारा अपनी पत्नी की गोद ली हुई बच्ची से शादी कर लेने की घटना चर्चा का विषय बनी थी। इसी तरह समलैंगिक 'विवाह' के आम हो जाने से नयी पीढ़ी पर समलैंगिकता का प्रभाव बढ़ रहा है।

जो बच्चे सामान्य परिवारों में भी पल रहे हैं, उनकी भी उचित देख-रेख नहीं हो पा रही है, क्योंकि माता-पिता के पास उनकी परवरिश के लिए काफी समय नहीं है। मूल परिवार में बच्चों के समाजीकरण के लिए समय उत्तरोत्तर घटता जा रहा है। अमरीकी माता-पिता 20 साल पहले तक बच्चों को जितना समय दे पाते थे आज उनका आधा भी नहीं दे पाते। माता, पिता और बच्चों में से हर कोई अपने-अपने कामों और शौकों में खोया रहता है। सब एक साथ घर में बहुत कम होते हैं और जब होते हैं तब भी कम्प्यूटर, फोन, इंटरनेट, म्यूजिक सिस्टम या टी. वी. से जुड़े होते हैं, एक-दूसरे से नहीं। रुचि का अन्तर इतना ज़्यादा है कि घरों में बच्चों के लिए इस तरह के उपकरण भी अलग होते हैं। यानी ऐसा भी नहीं कि सब मिलकर कुछ देख-सुन रहे हों। कई परिवार ऐसे हैं, पति-पत्नी अपनी नौकरी के सिलसिले में अलग-अलग शहरों में रहते हैं और बच्चों को बोर्डिंग स्कूल में रखते हैं। ऐसे परिवार के बच्चे माँ-बाप को फोन, फैक्स, ई-मेल से ही जानते हैं। माँ-बाप के पास बच्चों को पालने का समय नहीं है और दादा-दादी वृद्धाश्रम में रहते हैं। ऐसे में बच्चों को टी.वी. पाल रहा है। बच्चों का 'मार्गदर्शन' स्कूल या पास-पड़ोस के बड़े बच्चे कर रहे हैं–खासकर बिगड़े हुए बच्चे। पीढ़ी अन्तराल इतना ज़्यादा है कि माँ-बाप उसे अनुशासित कर नहीं पाते। 'अगर सभी ऐसा कर रहे हैं, तो तुम भी करो' कह देने के सिवा माता-पिता के पास कोई चारा नहीं।

Scanned with CamScanner
Scanned with CamScanner

दुर्भाग्य से मूल परिवार की इस प्रमुख भूमिका को निभाने के लिए अब पास-पड़ोस और बिरादरी जैसी भी कोई चीज इसलिए नहीं होती कि गतिशील आधुनिक इंसान आजीवन किसी एक जगह नहीं रहता। पाश्चात्य देशों में इ व्यक्ति जितनी ज़्यादा बार घर, नौकरी, शहर बदल पाता है वह आमतौर पर उतना ही ज़्यादा सफल होता है। बच्चे के लिए कहीं ठहराव नहीं है। जिस टी.वी. के आगे वह दिन में चार घंटे औसतन बिताता है उसमें भी सैकड़ों चैनल होते हैं, जिन्हें वह बदल-बदलकर देख सकता है। टी.वी. कार्यक्रम सेक्स और हिंसा से भरे होते हैं। जो कम्प्यूटर गेम बच्चा खेलता है उनमें आक्रामकता का स्वर प्रमुख होता है। यही कारण है कि बाल अपराध बड़ी तेजी से बढ़ रहे हैं।

आशावादियों को विश्वास है कि इक्कीसवीं सदी में इस्रायल के 'किबुत्स' जैसी सामुदायिक बस्तियाँ आम हो जायेंगी जिनमें लोग एक बिरादरी की तरह रहेंगे। ग्लोबल गाँव बिरादरी भावना का गाँव होगा।

बदलती पारिवारिक व्यवस्था की चुनौतियाँ

हाल के एक समाचार के अनुसार वाशिंगटन की सड़कों पर पाँच हजार युवक-युवतियों का जुलूस निकला। यह अपार भीड़ विवाह के अटूट बन्धन, एक जीवन-साथी के प्रति वफादारी और समाज को बचाने के लिए परिवार-भावना को पुनर्जीवित करने की आवाज़ बुलन्द करने के लिए जुटी थी। पाश्चात्य देशों में अब अति सम्पन्नता से ऊबे और यौन-स्वच्छन्दता के परिणामों से चिंतित लाखों लोग विवाह, परिवार जैसी पारम्परिक व्यवस्था की ओर लौटने के लिए उतावले हो उठे हैं। भारतीय विवाह-पद्धति का आदर्श उन्हें भाने लगा है। अमरीकी ही नहीं, चीनी, वियतनामी, कोरियाई, फ्रेंच, स्विस, जर्मन, अफ्रीकी मूल के युवक-युवतियाँ भी इस अभियान में शामिल थे। 'एड्स' जैसी भयंकर बीमारी ने भी उन्हें वैवाहिक बन्धन और परिवारवाद की ओर लौटने के लिए विवश किया है। प्रेम को ईश्वरीय देन और वफादारी को सामाजिक आवश्यकता मानकर अब कुछ बड़े प्रकाशन-समूह और चर्च भी लोगों को इस ओर प्रेरित कर रहे हैं।

पश्चिमी समाजशास्त्रियों एवं मानवशास्त्रियों ने अपने अध्ययनों से यही निष्कर्ष निकाला है कि जिन बच्चों का अपने माता-पिता के संरक्षण में समाजीकरण होता है वे प्रायः जीवन में कुछ ज़्यादा ही सफल होते हैं। हिंसा, आतंक व समाज-विरोधी प्रवृत्तियाँ टूटे परिवारों से ही निकल कर बाहर आ रही हैं। पश्चिम की नकल में अपनी दिशाएँ निर्धारित करने वाले हम भारतीयों के लिए यह समाचार न केवल सुखद है, बल्कि अपनी पारिवारिक आत्मीयता और ऊष्मा को वापस पाने की खोज में एक प्रेरणा या दिशा बोधक का भी काम करेगा।

सचमुच हमारी आज यही गति और स्थिति है। पश्चिमी जीवन-मूल्यों को अपनाने की होड़ में और उपभोक्तावाद की अन्धी दौड़ में जब हम अपनी विरासत के उज्ज्वल पक्षों को नज़रअन्दाज ही कर रहे हैं, उनका आकलन कैसे करेंगे? आकलन-मूल्यांकन नहीं होगा, तो पुनर्मूल्यांकन की और उसमें समयानुसार संशोधन, परिवर्द्धन, परिमार्जन की बात कैसे होगी ? परिवार के विखण्डन से समाज के विखण्डन तक जाकर भी क्या हम अपने भारतीय परिवार के अवमूल्यन पर तब बात करेंगे, जब पश्चिम में परिवार बहस केन्द्र में आ जायेगा ?

हमारी संयुक्त परिवार-प्रणाली में व्यक्तिगत और सामाजिक, सभी समस्याओं का समाधान था। बीमारों, अपंगों, वृद्धों, बच्चों, बेरोज़गारों, लाचारों के लिए किन्हीं अलग संस्थाओं की आवश्यकता न थी। उस टूटन की भरपाई आज 'पीड़ित महिला परामर्श केन्द्र', 'वृद्धाश्रम', 'होम', 'क्रेश' और 'आफ्टर केयर होम' आदि कितनी ही संस्थाएँ मिल कर भी कर पा रही हैं क्या? अपनी उज्ज्वल परम्पराओं पर आधारित उपयोगी संस्थाओं में समय के साथ कुछ विकृतियाँ आ गयी हैं, तो बदले समय के अनुरूप बनाने के लिए उनकी पुनर्निर्माण व परिमार्जन किया जाना चाहिए, न कि उनकी उपयोगिता को ही नकार कर समाज को उनके लाभ से वंचित करना चाहिए। परिवार के विकल्प के रूप में उभर कर सामने आ रही संस्थाएँ भारतीय मानसिकता के अनुकूल नहीं हैं। विवशता की स्थिति में वे स्वीकार्य होने पर भी वृद्धाश्रम और पालना-घर को जोड़ देने जैसे समाधान खोजे जाने चाहिए कि वृद्धों को बच्चों का साथ मिल सके और बच्चों को वृद्धों की छत्र-छाया में भावात्मक सुरक्षा प्राप्त हो सके।

Scanned with CamScanner
Scanned with CamScanner

बहरहाल, बात भारतीय परिवार की हो रही थी। बहुत कुछ विखर जाने के वाद भी भारत में परिवार अभी बचा है। गाँवों से शहरों की ओर पलायन के बाद भी लोग मानसिक रूप से गाँव के अपने घर-परिवार से जुड़े रहते हैं और गमी-खुशी के अवसरों पर सम्मिलित होकर, शहर में कमाए पैसे गाँव-घर भेजकर भौतिक रूप से भी जुड़े रहते हैं। परम्परागत रीति-रिवाज़ भी प्रायः उन्हें जोड़े रखते हैं। यह अलग बात है कि रूढ़ियाँ व अन्धविश्वास उनकी प्रगति में बाधक है, पर परम्परा और रूढ़ि में अन्तर समझने वाले लोग पिछड़ते नहीं, समाज में सन्तुलन कायम रखते हैं। ज़रूरत है, निरक्षर ग्रामवासियों को परम्परा और रूढ़ि का अन्तर समझाने की।

लेकिन बात शहरी बनाम ग्रामीण परिवार की नहीं, समग्र परिवार-संस्था की हो रही है और पश्चिमी सभ्यता व मीडिया कुप्रभावित होकर बदलते भारतीय परिवार की भी। औद्योगिक समाज के उपभोक्तावाद और वाज़ारवाद ने तो भारतीय परिवार को आघात पहुँचाया ही है, उस पर मीडिया के आकाशी हमले ने रही-सही कसर पूरी कर दी है। घर-घर पहुँचे दूरदर्शन ने ग्रामीण संयुक्त परिवार को भी नहीं बख्शा। समाज में अवैध सम्बन्धों की जैसे वाढ़ आयी हुई है। लगता है, परिवार अभी और टूटेंगे और परिवारों की टूटन समाज को और विखण्डित करेगी। आये दिन की हिंसा, बलात्कार की ख़बरें, नव-धनाढ्यों के कारनामे, आपाधापी और गलाकाट प्रतिद्वन्द्विता, भ्रष्टाचार और घोटाले, इस सबसे राजनीतिक अस्थिरता की ही नहीं, सामाजिक अराजकता की स्थितियाँ भी बन आयी हैं।

नारी परिवार की धुरी है। अतः नारी-आन्दोलन का दिशा-भटकाव भी परिवार संस्था को विखरने में अपनी भूमिका निभाता है। पश्चिम में यही हुआ, उसके बाद भारत में भी। पश्चिमी 'विमेन्स लिव' (Women's Lib) की तर्ज पर नारी-मुक्ति आन्दोलन चलाकर हमने देख लिया। परिणाम नारी-शोषण और वढ़ा, परिवार और विखण्डित हुए। पश्चिम में भी अतिवादी नारी मुक्ति आन्दोलन असफल हो गया, यहाँ तो उसे पनपने के लिए आधार भूमि ही नहीं मिली। इसलिए कुछ वर्ष के भटकाव के बाद भारतीय नारी मुक्ति आन्दोलन भी (अपवाद छोड़कर) अव सही पटरी पर आता दिखाई देने लगा है। 'करियर' और 'फैमिली' के बीच सन्तुलन ही अव अहम मुद्दा है।

पितृसत्तात्मक समाज और महिलाओं की स्थिति

औरत हिंसा का शिकार सदियों से हो रही है, परन्तु मौजूदा दौर में औरतों पर होने वाली हिंसा में काफी वृद्धि हुई है और यह अपने सबसे क्रूरतम रूप में सामने आ रही है। सवाल उठता है कि औरतों पर हमला करने वालों को नैतिक साहस कहाँ से मिलता है कि वे दिन के उजाले में, भरी भीड़ के सामने ऐसी हरकतें करते हैं। दरअसल यह पूरी व्यवस्था ही इस ढंग से वनी है कि यह इन मर्दों को न सिर्फ इतनी जगह प्रदान करती है कि वे अपने कुकृत्य आसानी से कर सकें, बल्कि उन्हें ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित भी करती है। ऊपरी तौर पर हमें कुछ वातें समझ तो आती हैं लेकिन अधिक गहराई में जाकर देखें तो पितृसत्ता पर आधारित परिवार, समाज एवं राज्य यह तीनों मिलकर पुरुषों के माध्यम से औरतों पर हिंसा करते हैं। मौजूदा समय में पितृसत्ता हिंसा करके ही औरतों पर अपना कब्जा बनाये रख सकती है, क्योंकि यदि औरत उसके कब्जे में नहीं रही तो उसका पूरा अस्तित्व ही हिल उठेगा। औरतों के दिन-रात की मेहनत के वल पर पुरुष अपनी ऐशो-आराम की जिन्दगी जी रहे हैं। औरतों पर हिंसा एवं शोषण से ही यह पितृसत्ता पूरी दुनिया में टिकी हुई है। परिवार, समाज एवं राज्य यह तीनों ही पितृसत्ता के वाहक हैं। पितृसत्ता ने अपने हित में औरतों पर अत्याचार को वैध किया हुआ है। चलती ट्रेन या बस में भरी भीड़ के सामने जब एक लड़की या औरत से वदतमीजी की जा रही होती है लोग देखते रहते हैं कोई वढ़कर आगे नहीं आता है। कोर्ट-कचहरी, कानून, पुलिस, राज्य-मशीनरी, धर्म-परिवार, जाति व्यवस्था, सभी पितृसत्ता के रूप में औरतों के खिलाफ होने वाली हिंसा को वैचारिक आधार प्रदान करते हैं।

औरतों पर हिंसा का कहर सबसे पहले उसके परिवार में ही शुरू होता है। परिवार के भीतर लड़की के खिलाफ हिंसा उसके जन्म से पहले ही कन्या भ्रूण-हत्या के रूप में शुरू हो जाती है और भिन्न-भिन्न तरीकों से जीवनपर्यन्त

Scanned with CamScanner
Scanned with CamScanner

चलती रहती है। अधिकांश भारतीय परिवारों में लड़के-लड़कियों के साथ भेदभाव भी औरतों के खिलाफ हिंसा का ही एक रूप है। परिवारों के भीतर प्रत्येक पुरुष का प्रत्येक महिला पर आधिपत्य होता है और इसी आधिपत्य के कारण वह औरतों पर तरह-तरह से हिंसा करता है। परिवार के भीतर पति को पत्नी के ऊपर असीमित अधिकार मिले हुए हैं। दहेज न लाने के लिए सज़ा के वतौर पत्नी का जला देना या पति द्वारा पत्नी की निर्मम पिटाई इसी का द्योतक है। पितृसत्ता की जड़ें बेहद गहरी होने के कारण परिवारों में औरतों पर हिंसा को लगभग जायज़ माना जाता है। बेहद कमज़ोर स्थिति होने के कारण और कभी-कभी स्वयं भी सामन्ती पितृसत्तात्मक सोच का शिकार होने के कारण औरतें घर के भीतर अपने प्रति होने वाली इस हिंसा का प्रतिरोध नहीं कर पातीं। घरेलू हिंसा एक व्यापक त्रासदी बन चुकी है और अधिकांश विवाहिताएँ इसकी शिकार हैं। इस मामले में पढ़े-लिखे और अनपढ़ दोनों ही तरह के पुरुष एक ही थैली के चट्टे-वट्टे हैं। पति भले ही पत्नी पर हाथ न उठाये, लेकिन उसे गंदी या भद्दी गालियाँ देना, वात-वात पर अपमानित करना, उसके मायके को कोसना आदि ऐसे आचरण हैं, जो पत्नी के स्वाभिमान पर चोट करते हैं। औरत को शारीरिक या मानसिक यातनाएँ देना पुरुष अपनी मर्दानगी समझता है। अधिकांश पत्नियाँ निर्दोष होने के वावजूद प्रताड़ित होती हैं। कुछ को यह प्रताड़ना कभी-कभी झेलनी पड़ती है, तो कुछ को रोज़ाना। सच तो यह है कि नारी सहती है, इसलिए पुरुष उस पर जुल्म करता है। जब नारी ही चुप्पी साध ले तो पुरुष के हौसले तो वुलंद होंगे ही। अधिकांश पत्नियाँ अपनी गृहस्थी की ख़ातिर चुप रहती हैं जिससे पुरुषों को शह मिलती है, उन्हें प्रताड़ित करने की। विवाह की संस्था हमारे समाज में औरतों के प्रति होने वाली हिंसा का सबसे सुसज्जित रूप है। विवाह की वेदी पर प्रतिदिन औरतें आहुति बनकर होम हो जाती हैं। अधिकांश पुरुषों के लिए विवाह धन-सम्पत्ति और औरत को अर्जित करने का एक माध्यम मात्र है। आज हमारे देश में दहेज-हत्या एवं दुल्हन को जलाने या प्रताड़ना देने का कारोबार बढ़ता जा रहा है और पूरा समाज औरतों पर होने वाली हिंसा की दावत में बड़ी खुशी-खुशी शामिल हो रहा है। यही नहीं पूरा समाज परिवार के माध्यम से औरतों पर अपना आधिपत्य रखता है। जो औरतें कोई परम्परा तोड़ती हैं तो उन्हें समाज मिलकर सज़ा देता है।

धर्म भी हमेशा औरतों को ही अपना शिकार बनाता है। लगभग सभी धर्म पितृसत्ता को ही पोषित करते हैं और औरत को पुरुषों का गुलाम वने रहने की शिक्षा देते हैं। वलात्कार पितृसत्ता द्वारा औरतों पर अधिकार एवं शक्ति प्रदर्शन करने एवं वदला लेने का सबसे घृणित हथियार है। हमारे देश में सवर्ण एवं अमीर पुरुष इसे दलित एवं गरीब औरतों पर शोषण के एक औज़ार के रूप में इस्तेमाल करते हैं। अपनी विकृत सामन्ती मानसिकता के कारण वे गरीब दलित औरतों को अपनी सम्पत्ति समझते हैं। औरतों के खिलाफ होने वाली हिंसा में सबसे ख़तरनाक है-राज्य द्वारा की जाने वाली हिंसा। राज्य औरतों पर हिंसा करने का सबसे संघटित तन्त्र है। राज्य द्वारा की जाने वाली हिंसा अपने चरित्र में पितृसत्तात्मक एवं फासीवादी है। इसे शासक वर्ग का समर्थन मिला होता है। जव भी राज्य के खिलाफ कोई आन्दोलन होता है, तो राज्य अपनी पुलिस, सेना एवं नौकरशाही के दलवल के साथ औरतों के ऊपर हिंसा करने पर उतर आता है। उत्तराखण्ड आन्दोलन के दौरान मुजफ्फरनगर कांड इसका जीता-जागता उदाहरण है। वावा रामदेव के आन्दोलन के तहत आधी रात जव पुलिस ने निहत्थे आन्दोलनकारियों पर वर्वरता पूर्वक लाठीचार्ज किया तो औरतों पर ही उनका कहर सबसे अधिक ढहा। आन्दोलनकारी राजबाला की गंभीर चोटों के कारण हुई मौत राज्य हिंसा का क्रूरतम रूप है। राज्य आंदोलनकारी औरतों पर गाली-गलौज, लाठीचार्ज, अपमान एवं अन्ततः वलात्कार करता है ताकि उनका प्रतिरोध टूट जाये। इस तरह औरतों पर होने वाली हिंसा अनायास ही नहीं बढ़ी हैं। इसमें कुछ शक़ नहीं है कि समाज में संवेदनहीनता बढ़ी है, किन्तु औरतों के खिलाफ हिंसा के बहुत गहरे सामाजिक-राजनीतिक आधार हैं।

औरतों पर हिंसा सदियों से हो रही है। इसकी जड़ों को सामन्ती पितृसत्ता पोषित करती है, जिसके तहत औरतों को महज उपभोग की वस्तु माना जाता है। यह सत्ता औरतों के स्वतन्त्र अस्तित्व से इन्कार करती है। आज औरतों पर हिंसा के रूप इतने विकृत इसलिए हो गये हैं, क्योंकि इन सामन्ती सोचों से वाज़ार के मूल्य भी घुलमिल गये हैं, जो सिर्फ पैसे को ही अहमीयत देता है। किन्तु अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए वाज़ार भी औरतों की पराधीनता एवं पितृसत्ता की ही वकालत करता है। कुल मिलाकर औरतों के खिलाफ होने वाली हिंसा के मूल पितृसत्तात्मक

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

व्यवस्था ही है। इसके कारण समाज में औरतों की स्थिति नगण्य-सी है, इसलिए कदम-कदम पर उनका अपमान किया जाता है। इस तरह पितृसत्ता औरतों की स्वतन्त्र अस्मिता के लिए अभिशाप है। अपने अस्तित्व को बनायें रखने के लिए वह औरतों पर तरह-तरह के शोषण एवं हिंसा करती है। आज कितनी ही औरतें अपने ऊपर होने वाले अत्याचार के विरोध में आवाज़ उठाती हैं या न्यायालय की शरण में जाती हैं? औरत को अपना वजूद समझना होगा। उसे अपने मान-सम्मान की रक्षा स्वयं करनी होगी। आज औरतें पहले की तरह खामोश नहीं हैं। दामिनी बलात्कार काण्ड के दौरान देश भर में सड़कों पर उतरी औरतें की भीड़ ने इसकी छवि पेश की। अब औरतें हिंसा के खिलाफ तरह-तरह से प्रतिरोध कर रही हैं। जिस दिन औरतें पितृसत्ता की इस व्यवस्था को मानने से इन्कार कर देंगी, उसी दिन तस्वीर बदल जायेगी। अत: औरतों पर होने वाली हिंसा को पूरी तरह से रोकने के लिए पितृसत्ता का समूल खात्मा आज महिला-आन्दोलन प्रमुख मुद्दा होना चाहिये।

REFERENCES

Bernard, Jessie, **The Future of Marriage**, New York: World, 1972.

Clayton, Richard R., **The Family, Marriage and Social Change**, Lexington: Mass., 1979.

Conklin, John E., **Sociology**, New York: Macmillan Publishing Co., 1984.

Giddens, Anthony, **Sociology**, Cambridge: Polity Press, 1993.

Goode, William J., **World Revolution and Family Patterns**, New York: Free Press, 1963.

——, **The Family**, New Delhi, Prentice-Hall of India, 1975.

Haralambos, M., **Sociology: Themes and Perspectives**, New Delhi: Oxford University Press, 1989.

Horton, Paul B. and Hunt, Chester L., **Sociology**, Tokyo: McGraw-Hill International Book Company, 1980.

Johnson, Harry M., **Sociology: A Systematic Introduction**, New Delhi: Allied Publishers Private Limited, 1983.

Laslett, Peter, **Family and Illicit Love in Earlier Generation**, Cambridge: Cambridge University Press, 1977.

Leslie, Gerald R. and Larson, Richard F. and Gorman, Benjamin L., **Introductory Sociology**, New York: Oxford University Press, 1980.

Levitan, Sar A. and Belous, Richard S., **What's Happening to the American Family?** Baltimore: Johns Hopkins University Press, 1981.

MacIver, R.M. and Page, Charles H., **Society: An Introductory Analysis**, New Delhi: Macmillan India Limited, 1985.

Marshall, Gordon, **Oxford Dictionary of Sociology**, Oxford: Oxford University Press, 1998.

Murdock, George P., **Social Structure**, New York: Macmillan, 1949.

Shepard, Jon M., **Sociology**, New York: West Publishing Company, 1981.

Singh, J.P., 'Changing Village, Family Structure and Fertility Behaviour: Evidence from India', **International Journal of Contemporary Sociology** (USA), Vol. 38(2), October 2001: 229–248.

——, 'India's Changing Family and State Intervention', **The Eastern Anthropologist**, Vol. 63(1), January-March 2010: 17–40.

Spencer, Metta, **Foundations of Modern Sociology**, New Jersey: Prentice-Hall, Inc., 1976.

Zeitlin, Irving M., **The Social Condition of Humanity: An Introduction to Sociology**, New York: Oxford University Press, 1981.

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner